शोध मंथन Vol. XVII No.2 Apr.- June. 2026 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X, Impact Factor 8.889 (SJIF)
https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.046

दलित महिलाओं का लैंगिक समावेशन और बदलता राजनीतिक समायोजनः एक समाज वैज्ञानिक विश्लेषण

प्राप्तिः 21.04.2026
स्वीकृतः 07.06.2026

46

सूरज कुमार वर्मा
शोध छात्र
सामाजिक समावेशन अध्ययन केंद्र
काशी हिंदू विश्वविद्यालय
वाराणसी
ईमेलः *v_suraj@bhu.ac.in*

डॉ शरद धर शर्मा
सहायक आचार्य
सामाजिक समावेशन अध्ययन केंद्र
काशी हिंदू विश्वविद्यालय
वाराणसी
ईमेलः *sharad@bhu.ac.in*

सारांश

यह शोध पत्र भारतीय समाज में दलित राजनीति के जटिल परिदृश्य का अन्वेषण करता है, विशेष रूप से दलित महिलाओं को जाति, लिंग और आय के आधार पर तीन स्तरों पर उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। यह अंतर्संबंधी असमानता, जो ऐतिहासिक और समकालीन दोनों संदर्भों में गहराई से निहित है, दलित महिलाओं को सामाजिक पदानुक्रम में एक अद्वितीय और गंभीर रूप से हाशिए पर स्थित स्थिति में रखती है। इस शोषण का विश्लेषण विभिन्न विद्वानों, जैसे जी.एस. घुर्ये, लुई दुमॉ, और एम.एन. श्रीनिवास द्वारा प्रतिपादित जाति व्यवस्था की सैद्धांतिक रूपरेखाओं के माध्यम से किया जाएगा, और फिर जाफरलोट, सुदा पाई, और आनंद तेलतुंबडे जैसे समकालीन शोधकर्ताओं के परिप्रेक्ष्य से इसकी वर्तमान प्रासंगिकता का आकलन किया जाएगा। इस शोध पत्र में डॉ. बी.आर. अंबेडकर के दलित चेतना कि राजनीतिकरण के ऐतिहासिक विकास का पता लगाया गया है, जिसमें दलित महिलाओं के राजनीतिक समायोजन और लैंगिकं समावेशन पर विशेष ध्यान दिया गया है। यह शोध इस बात पर जोर देता है कि दलित विमर्श को केवल जातिगत अलगाव के दृष्टिकोण से देखना अपर्याप्त है, क्योंकि यह आर्थिक या आय–आधारित असमानता के सामाजिक प्रभावों को अनदेखा करता है। यह दृष्टिकोण दलित महिलाओं के लिए मुक्ति के मार्गों की पहचान करने और लिंग–संवेदनशील नीतियों के विकास के लिए महत्वपूर्ण है जो उनके अनुकूलन रणनीतियों को सशक्त बनाते हैं।

मुख्य शब्द

दलित महिलाएं, लैंगिक समावेशन, तेहरा शोषण, दलित राजनीति।

परिचय

भारतीय संदर्भ में जाति और लिंग दोनों ही सामाजिक स्तरीकरण के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं, और दलित महिलाएँ अक्सर इन श्रेणियों के बीच फंसी रहती हैं, जिससे उनकी आवाज हाशिए पर

चली जाती है। जातिगत उत्पीड़न के साथ–साथ पितृसत्तात्मक शोषण, दोहरी मार्जिनलाइजेशन, जो भूमिहीनता और कृषि श्रम में उनकी उच्च भागीदारी से और बढ़ जाती है, उनके स्वास्थ्य और कल्याण को भी गंभीर रूप से प्रभावित करती है (Goswami & Pinto, 2022)। यह अंतर्संबंधी असमानता न केवल लैंगिक एवं सामाजिक बल्कि आर्थिक संकेतकों में भी परिलक्षित होने के साथ व्यक्तिगत पहचान और स्वयं के निर्माण की प्रक्रियाओं को भी आकार देती है। इन अनुभवों का विश्लेषण करने के लिए, बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो लैंगिक पहचानों की विविधता और शक्ति संरचनाओं द्वारा विभिन्न पहचानों के सीमांतीकरण को स्वीकार करता है। यह अध्ययन ग्रामीण महिलाओं के मध्य जाति–आधारित असमानताओं को समझने के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह लैंगिक भूमिकाओं को प्रभावित करने वाली सामाजिक–आर्थिक गतिशीलता और क्षेत्रीय भिन्नताओं की गहरी समझ प्रदान करता है। भारत में जाति और लिंग इतने गहराई से अंतर्संबंधित हैं कि एक महिला की वास्तविक स्थिति को उसकी जाति जनजाति पहचान के बिना नहीं समझा जा सकता, भले ही भौगोलिक क्षेत्र कोई भी हो (Jiwani et al., 2022; Mal & Saikia, 2024)। यह विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं के लिए सत्य है, जो अक्सर जाति, आय और लिंग विभाजनों के साथ–साथ महिलाओं से जुड़े अन्य अंतर्निहित मुद्दों का शिकार होती हैं, जो उन्हें परिवार के भीतर और बाहर दोनों जगह अधीनस्थ स्थिति में धकेल देते हैं। इन सामाजिक पहचानों का अंतर्संबंध स्वास्थ्य असमानताओं को जन्म देता है, जिसमें भौतिक संसाधनों, शिक्षा, व्यवसाय, पोषण संबंधी सहायता और सामुदायिक हिंसा के संपर्क जैसे पहलू शामिल हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, विशेषकर निचली जातियों की महिलाओं को उच्च जातियों की तुलना में अत्यधिक भेदभाव का सामना करना पड़ता है, और वे इसे जीवन की एक सच्चाई के रूप में स्वीकार करने की प्रवृत्ति रखती हैं (Jiwani et al., 2022)। यह प्रवृत्ति अक्सर शिक्षा तक असमान पहुंच और ग्रामीण–शहरी विभाजन से उत्पन्न होने वाले मजबूत आर्थिक और संरचनात्मक बाधाओं से और भी जटिल हो जाती है, जो उनकी सशक्तिकरण की क्षमता को बाधित करती है। इन महिलाओं को प्रायः कई रूप से कमजोर माना जाता है, उनके लिंग, जाति और गरीबी के कारण–जिससे वे अपने अधिकारों का दावा करने और आवश्यक सेवाओं तक पहुँचने में अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करने में असमर्थ होती हैं। इन चुनौतियों को दूर करने के लिए, लैंगिक परिवर्तनकारी दृष्टिकोणों की आवश्यकता है जो शक्ति संबंधों को संबोधित करते हुए संसाधनों के वितरण और कर्तव्यों के आवंटन को चुनौती देते हैं, तथा जाति, आय और लिंग के जटिल अंतर्संबंधों को पहचानते हैं (Chatterjee et al., 2023; RamPrakash & Lingam, 2021)। अतः इन जटिल असमानताओं को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिए एक बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है जो लैंगिक संवेदनशीलता के साथ–साथ जातिगत विशिष्टताओं को भी समाहित करती हो। यह रणनीति विषेश रूप से दलित महिलाओं के अनुभवों को केंद्र में रखती है, जहाँ जाति, लिंग और आय का अंतर्संबंध उनकी स्वायत्तता और संस्थाओं को प्रभावित करता है। महिलाओं के सशक्तिकरण और लैंगिक समानता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म और वृहद दोनों स्तरों पर संस्थागत संबंधों के पाँच आयामों – नियम, गतिविधियाँ, संसाधन, लोग और शक्ति संबंधों की विस्तृत जाँच आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, अदृश्य लैंगिक बाधाएँ घरों, समुदायों और व्यापक संस्थानों में महिलाओं के सशक्तिकरण को बाधित करती हैं, जिससे मौजूदा अंतराल अनजाने में और चौड़े होते

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.046

जाते हैं, जिससे इन बाधाओं को दूर करने के लिए विकास संबंधी मान्यताओं और लैंगिक अंतरालों का पुनर्विचार आवश्यक है।

दलित चेतना का ऐतिहासिक विकास और लिंग परिप्रेक्ष्य

दलित आंदोलनों के प्रारंभिक चरणों से लेकर वर्तमान तक दलित महिलाओं की भूमिका और उनके अनुभवों को विशेष रूप से उजागर करना आवश्यक है, जो समग्र दलित विमर्श में उनके योगदान को स्थापित करेगा। यह परिप्रेक्ष्य दलित महिलाओं द्वारा अनुभव की जाने वाली अनूठी अंतर्संबंधी असमानताओं को समझने के लिए महत्वपूर्ण है, जिसमें जाति, लिंग और आय के शोषण के जटिल प्रभाव शामिल हैं। ऐतिहासिक रूप से, भारत में स्वास्थ्य सेवाएँ सामाजिक और संरचनात्मक असमानताओं की अभिव्यक्ति रही हैं, जहाँ हाशिए पर पड़े समुदायों, विशेषकर दलित महिलाओं को, LokLF; vf/kdkjksd hekax dsfy, fujarj tokcnsghj.kuhfr;kfodfl r djuhi Mhg&(Goswami & Pinto, 2022)। इन रणनीतियों में अक्सर सामुदायिक–आधारित साक्ष्य का उपयोग शामिल होता है, जो संरचनात्मक भेदभाव को संबोधित करने के लिए मानवाधिकारों और संवैधानिक परिप्रेक्ष्यों को सामूहिक कार्रवाई के साथ मिश्रित करता है। यह दृष्टिकोण दलित महिलाओं को उनकी स्वास्थ्य सेवा आवश्यकताओं के लिए न केवल एक आवाज प्रदान करता है, बल्कि उन्हें स्वास्थ्य नीतियों और कार्यक्रमों के निर्माण में सक्रिय भागीदार बनने में भी सक्षम बनाता है, जिससे उनके अनुकूलन की प्रक्रिया में स्वायत्तता और आत्मनिर्णय को बढ़ावा मिलता है। फुको के अनुशासनात्मक शक्ति के सिद्धांतों के अनुरूप है, जो दर्शाता है कि कैसे पितृसत्तात्मक संरचनाएँ दलित महिलाओं को समाज में अधीन करने के लिए शक्ति संबंधों का उपयोग करती हैं और उनके शरीरों को नियंत्रण के क्षेत्र में बदल देती हैं (Ghosh, 2021)। यह दृष्टिकोण दलित महिलाओं के लिए सामाजिक नागरिकता को मजबूत करने की क्षमता रखता है, जिससे समानता और गरिमा को बढ़ावा मिलता है, विशेषकर स्वास्थ्य सेवाओं तक उनकी पहुंच सुनिश्चित करने में (Goswami & Pinto, 2022)। इसके अतिरिक्त, विमर्श विश्लेषण जैसे उपकरण दलित महिलाओं के स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित नीतिगत विमर्शों में निहित अप्रत्यक्ष पूर्वाग्रहों और सत्ता समीकरणों को उजागर करने में सहायक हो सकते हैं। यह पद्धतिगत दृष्टिकोण, विषेश रूप से महत्वपूर्ण विमर्श विश्लेषण, भाषाई संरचनाओं के भीतर छिपे सामाजिक पदानुक्रमों को पहचानने और चुनौती देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिससे दलित महिलाओं के लिए सामाजिक न्याय की स्थापना हो सके (Sreekumar, 2023)। इस प्रकार, दलित महिलाओं के अनुकूलन की रणनीति केवल उत्तरजीविता तक सीमित न होकर, उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण को भी बढ़ावा देती है, जिससे वे अपने अधिकारों के लिए सक्रिय रूप से संघर्ष कर सकें।

तेहरा शोषण और दलित महिलाओं की स्थिति

तीन स्तरों पर उत्पीड़न, जिसमें जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता और आर्थिक अभाव शामिल हैं, दलित महिलाओं को सामाजिक पदानुक्रम में सबसे निचले पायदान पर रखता है। इस कारण उन्हें न केवल लैंगिक भेदभाव, सामाजिक तिरस्कार और आर्थिक विपन्नता का सामना करना पड़ता है, बल्कि उन्हें अक्सर शारीरिक और मानसिक हिंसा का भी शिकार होना पड़ता है। यह स्थिति

उन्हें उन स्थानों तक पहुँचने से रोकती है जहाँ उन्हें सामाजिक समर्थन मिल सकता है और यही स्थितियां उन्हें आत्मनिर्भर बनने के अवसरों से वंचित करती है। परिणामतः यह व्यवस्था उनके लिए निरंतर गरीबी के चक्र को बनाए रखती है, जहाँ शिक्षा, आय और सामाजिक गतिशीलता में सीमित पहुँच के कारण उनका जीवन–स्तर निम्न बना रहता है। विशेष रूप से, यह संरचना दलित महिलाओं को श्रम बाजार में हाशिए पर रखती है, उन्हें अक्सर अनौपचारिक और निम्न–भुगतान वाले श्रम में धकेल देती है, जिससे उनकी आर्थिक स्वतंत्रता और स्वायत्तता बाधित होती है (Raft & Dahlin, 2025)। इन चुनौतियों का सामना करते हुए, भारत में एससी और एसटी महिलाएँ अक्सर ग्रामीण श्रम बल पर हावी रहती हैं, विशेषकर कृषि क्षेत्र में, जहाँ वे अक्सर सवैतनिक और अवैतनिक दोनों तरह के कार्यों में लगी रहती हैं। यह स्थिति उन्हें आर्थिक रूप से अस्थिर बनाती है और उन्हें निम्न–आय वाले व्यवसायों में धकेलती है, जहाँ उन्हें अक्सर कार्यस्थल पर भेदभाव का सामना करना पड़ता है और उनकी सौदेबाजी की शक्ति (bargaining power) कम होती है (Liczbińska et al., 2023)। इसके अतिरिक्त, जाति–आधारित भेदभाव स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं के दृष्टिकोण और व्यवहार के माध्यम से भी प्रकट होता है, विशेषकर, दलित महिलाओं को स्वास्थ्य कर्मियों के भेदभावपूर्ण व्यवहार के कारण मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि गैर–दलित स्वास्थ्य कर्मी अक्सर शारीरिक निकटता से परहेज करते हैं (Goswami & Pinto, 2022)। जो अंततः उनके मातृ स्वास्थ्य परिणामों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। यह जातीय और लैंगिक भेद्यता का संयोजन स्वास्थ्य प्रणालियों में संरचनात्मक असमानताओं को उजागर करता है, जहाँ दलित महिलाएँ अक्सर अपर्याप्त या निम्न–गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सेवाओं का अनुभव करती हैं, जिससे उनकी भलाई और जीवन प्रत्याशा पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस संदर्भ में, भारत में महिलाओं के बीच वेतन असमानता का विश्लेषण करने वाले अध्ययनों से पता चला है कि इन सामाजिक–आर्थिक विषमताओं के बावजूद, अनुसूचित जाति जनजाति और अन्य पिछड़ा आय की 68% से 80% महिलाएँ संस्थागत प्रसव सेवाओं का उपयोग करती हैं, जबकि उच्च जातियों की 83% महिलाएँ इन सेवाओं का लाभ उठाती हैं, जो स्वास्थ्य सेवा पहुँच में भी जाति–आधारित अंतर को उजागर करता है। यह अंतर, हालांकि तुलनात्मक रूप से छोटा प्रतीत हो सकता है, फिर भी जातिगत भेदभाव के सूक्ष्म और अंतर्निहित प्रभावों को इंगित करता है जो स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करते हैं (Mishra et al., 2021; Pandey et al., 2024)। यह असमानता ग्रामीण क्षेत्रों में और भी अधिक स्पष्ट होती है, जहाँ ग्रामीण महिलाएं शहरी महिलाओं की तुलना में स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँचने में कम सक्षम होती हैं।

आधुनिक सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन और डॉ. अंबेडकर

दलित मुक्ति के संदर्भ में, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की शिक्षाएँ और उनकी "शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो" (Educate, Agitate, Organize) की अवधारणा दलित महिलाओं के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, जो उन्हें अपनी मुक्ति के लिए मुखर होने और संगठित होने का आह्वान करती है। यह त्रिसूत्रीय रणनीति दलित महिलाओं को अपनी आवाज बुलंद करने, अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने और सामूहिक शक्ति के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए एक सशक्त माध्यम प्रदान करती

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.046

है। इस प्रकार, अम्बेडकरवादी दर्शन दलित महिलाओं के लिए न केवल सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत करता है, बल्कि उन्हें व्यवहारिक रूप से अपनी परिस्थितियों को परिवर्तित करने के लिए एक कार्ययोजना भी प्रदान करता है। यह सुनिश्चित करता है कि दलित महिलाएँ केवल निष्क्रिय प्राप्तकर्ता न हों, बल्कि वे स्वयं अपने सशक्तिकरण की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनें, जिससे उनकी विशिष्ट पहचान और संघर्षों को मान्यता मिले। इसी क्रम में, अंबेडकर के दर्शनशास्त्र से प्रेरणा लेते हुए, दलित महिलाओं ने पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देने और अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने के लिए विभिन्न "अवसरों के स्थानों" (opportunity spaces) का निर्माण किया है, जहाँ वे एक साथ आकर सीखती और साझा करती हैं (Farnworth et al., 2023)। इन साझा अनुभवों और सामूहिक मंचों के माध्यम से, दलित महिलाएँ अपनी शक्ति को व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर मजबूत कर सकती हैं, जिससे वे समाज में व्याप्त जाति, लिंग और आय–आधारित असमानताओं के विरुद्ध प्रभावी ढंग से संघर्ष कर सकें। उनके विचार, जो असमानताओं के प्रणालीगत स्वरूप को चुनौती देते थे, दलितों को उपेक्षित समूहों के रूप में मान्यता देने और उनके अधिकारों के लिए राज्य–अनिवार्य प्रतिनिधित्व की वकालत करते थे। अंबेडकर ने सभी आय–आधारित और सांप्रदायिक रूप से अलग निर्वाचक मंडलों को समाप्त करने का आह्वान किया, और दलितों के लिए सीटों के आरक्षण जैसे प्रावधानों के माध्यम से सामान्य निर्वाचक मंडलों द्वारा विशिष्ट समुदायों या वर्गों के हितों की सर्वोत्तम सेवा की जा सकती है, इस मत का समर्थन किया (Kumar et al., 2021)। उन्होंने ''मानवीय सम्मान और गरिमा से वंचित लोगों को स्वतंत्रता और समान अधिकार'' प्रदान करने वाले एक नए संहिता की आवश्यकता पर जोर दिया जो दलितों को सामाजिक और राजनीतिक रूप से सशक्त बनाने की उनकी रणनीति को दर्शाता है। अंबेडकर ने जाति–आधारित भेदभाव को समाप्त करने और दलित महिलाओं सहित सभी महिलाओं को पूर्ण नागरिकता के अधिकार दिलाने के लिए संवैधानिक और कानूनी सुधारों पर बल दिया। यह दृष्टिकोण अंतर–संबंधित असमानता प्रणालियों की व्यापक समझ के साथ, अधीनस्थ आबादी के लिए समानता प्राप्त करने हेतु संस्थागत और संगठनात्मक तंत्रों पर पुनर्विचार करने की उनकी क्षमता को दर्शाता है। प्रतिनिधित्वकारी राजनीति पर अंबेडकर का जोर सार्वभौमिक मानवाधिकारों को सुरक्षित करने का एकमात्र सच्चा माध्यम और प्रारंभिक बीसवीं सदी के आंदोलनों की संकीर्णता को दूर करना था। इसी अवधि में, दलित महिलाओं के अद्वितीय अनुभवों को उजागर करने वाले दलित नारीवाद का उदय हुआ, जिसने जाति, आय और लिंग के प्रतिच्छेदन पर ध्यान केंद्रित किया। अंबेडकर ने असमानता के इस बहुआयामी स्वरूप को समझा और एक ऐसे व्यापक सुधार की वकालत की जो इन अंतर्संबंधित असमानताओं को एक साथ संबोधित करे, न कि केवल आंशिक रूप से। यह दृष्टिकोण दलितों को अपने स्वयं के उत्थान के लिए राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के महत्व पर बल देता है, जिसे अम्बेडकर ने सामाजिक अन्याय और आर्थिक शिकायतों को दूर करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रारंभिक बिंदु माना। आनंदिता पैन *"दलित महिलाओं में उत्परिवर्तनः एक नए सामाजिक जीव का जन्म"* में एक नई पहचान के रूप में वर्णित करती हैं। यह पहचान उन्हें पारंपरिक नारीवादी आंदोलनों से अलग करती है, क्योंकि ये आंदोलन अक्सर जातिगत शोषण के विशिष्ट अनुभवों को पूरी तरह से संबोधित करने में विफल रहे हैं, जिससे दलित महिलाओं को अपनी विशिष्ट चुनौतियों और अनुभवों को मुखर करने के लिए एक अलग मंच की आवश्यकता हुई है।

दलित महिलाओं का राजनीतिक समावेशन और चुनौतियाँ

दलित महिलाओं के राजनीतिक समावेशन की प्रक्रिया में, शक्ति की गतिशीलता और पहचान की राजनीति का अध्ययन महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि कैसे सामाजिक दमन और हाशिए पर धकेलने की प्रक्रियाओं को व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यम से समझा जा सकता है। इस प्रकार, दलित महिलाएँ केवल निष्क्रिय प्राप्तकर्ता न रहकर, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक बदलावों की सक्रिय सूत्रधार बनकर अपनी भूमिका का निर्वहन करती हैं। यह सक्रियता उन्हें न केवल अपनी व्यक्तिगत पहचान और गरिमा को स्थापित करने में सहायता करती है, बल्कि व्यापक सामाजिक संरचनाओं में भी परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण योगदान देती है (Ghosh, 2021; Goswami & Pinto, 2022)। इन प्रयासों से वे स्थानीय शासन में भी प्रभावी भूमिका निभा रही हैं, जिससे समुदाय–आधारित समस्याओं का समाधान हो रहा है और समावेशी नीतियों को बढ़ावा मिल रहा है। दलित महिलाएँ, जमीनी स्तर पर राजनीतिक सक्रियता के माध्यम से, न केवल अपने समुदायों में राजनीतिक व्यवहार को आकार देती हैं बल्कि व्यापक राजनीतिक परिदृश्य में भी लैंगिक समानता की वकालत करती हैं। ये महिलाएँ न केवल सांस्कृतिक बदलावों को बढ़ावा देती हैं जो लैंगिक समानता और महिलाओं के आर्थिक योगदान के मूल्य पर प्रकाश डालते हैं, बल्कि वे राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को पूरी तरह से बदलने की क्षमता भी रखती हैं। इस प्रकार, उनका योगदान केवल चुनावी राजनीति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह व्यापक सामाजिक मानदंडों को चुनौती देता है और समतावादी समाजों की नींव रखता है।

इसके बावजूद, यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य के सापेक्ष क्षेत्रीय स्तर पर दलित महिला नेतृत्व का अपेक्षाकृत कम प्रतिनिधित्व देखा गया है, जो दलित राजनीति में एक महत्वपूर्ण अंतर को दर्शाता है। यह कमी इन महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता को बाधित करती है और उन्हें स्थानीय स्तर पर प्रभावी ढंग से संगठित होने से रोकती है, जिससे उनके सशक्तिकरण की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है। इस चुनौती का समाधान करने के लिए, नीतिगत हस्तक्षेपों में क्षमता निर्माण कार्यक्रम, राजनीतिक शिक्षा, वित्तीय सहायता, और संरक्षकता के अवसर शामिल होने चाहिए, ताकि वे नेतृत्व की भूमिकाओं में सफलतापूर्वक एकीकृत हो सकें (Goyal, 2023)। यह अवलोकन इस बात पर प्रकाश डालता है कि किस प्रकार अंतर्विभागीय असमानताएँ (intersectionality) राजनीतिक सहभागिता के लाभों को भी प्रभावित करती हैं, जहाँ जाति और धर्म जैसे कारक लिंग के साथ मिलकर महिलाओं की राजनीतिक सशक्तिकरण की पहुँच को आकार देते हैं।

निष्कर्ष

इस अध्ययन का दृष्टिकोण सामाजिक जवाबदेही प्रक्रियाओं को नियोजित करते हुए मानवाधिकार परिप्रेक्ष्यों के माध्यम से जाति और लिंग–आधारित भेदभाव को संबोधित करने में महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, उनकी राजनीतिक सक्रियता और अनुकूलनशीलता केवल व्यक्तिगत सशक्तिकरण तक सीमित नहीं है, बल्कि एक व्यापक सामाजिक और संरचनात्मक परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है जो असमानता के मूल कारणों को संबोधित करता है। सामुदायिक स्तर पर स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए दलित महिलाओं द्वारा अपनाई गई नवोन्मेशी

रणनीतियाँ, जैसे कि जननी सुरक्षा कार्यक्रम जैसी योजनाओं का लाभ उठाना, उनके सशक्तिकरण का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। यह दृष्टिकोण दलित महिलाओं को केवल लाभार्थी के रूप में नहीं, बल्कि स्वास्थ्य प्रणालियों के भीतर महत्वपूर्ण अभिकर्ताओं के रूप में स्थापित करता है, जो सेवाओं की उपलब्धता और गुणवत्ता में सुधार के लिए सक्रिय रूप से योगदान करती हैं। इस प्रक्रिया के तहत, वे समुदाय के भीतर राजनीतिक क्षमताओं का विकास करती हैं, सशक्तिकरण को बढ़ावा देती हैं, और व्यवस्थागत परिवर्तनों की सीमाओं को भी उजागर करती हैं। इन पहलों के माध्यम से, दलित महिलाएँ न केवल अपनी सामाजिक नागरिकता और गरिमा को पुनर्स्थापित करती हैं, बल्कि मानवाधिकारों की उपलब्धता और पहुंच के व्यापक परिप्रेक्ष्य में भी महत्वपूर्ण सुधार लाती हैं। यह समुदाय–आधारित दृष्टिकोण, जिसे दलित महिलाएं सक्रिय रूप से अपना रही हैं, हाशिए पर पड़े समुदायों की बातचीत की शक्ति को बढ़ाता है और नीति–निर्माताओं तथा स्वास्थ्य पदानुक्रमों में सार्वजनिक प्रतिबद्धता को बढ़ावा देने के लिए साक्ष्य–आधारित रणनीतियों को नियोजित करता है। सामुदायिक साक्ष्यों को मीडिया का ध्यान आकर्षित करने वाली विविध कल्पनाशील रूपों में प्रस्तुत करके, बड़े राजनीतिक स्थानों का लाभ उठाकर, और संवेदनशील–भावनात्मक रूप से चार्ज की गई प्रतिकूल घटनाओं का उपयोग करके सार्वजनिक अधिकारियों तक साक्ष्य प्रसारित करने में नवसाक्षर महिलाओं का सामूहिक प्रयास उल्लेखनीय है। यह रणनीति न केवल दलित महिलाओं की गरिमा और सशक्तिकरण को सुनिश्चित करती है, बल्कि यह उन्हें साक्ष्य–आधारित हस्तक्षेपों के माध्यम से सामुदायिक लामबंदी और स्वास्थ्य तथा प्रशासनिक प्रणालियों के साथ बातचीत करने में भी सक्षम बनाती है।

सन्दर्भ

1. Chatterjee, P., Chen, J. T., Yousafzai, A. K., Kawachi, I., & Subramanian, S. V. (2023). When social identities intersect: understanding inequities in growth outcomes by religion- caste and religion-tribe as intersecting strata of social hierarchy for Muslim and Hindu children in India. *International Journal for Equity in Health*, *22*(1). https://doi.org/10.1186/s12939-023-01917-3
2. Farnworth, C. R., Bharati, P., & Galiè, A. (2023). Empowering women, challenging caste? The experience of a dairy cooperative in India. *Frontiers in Sustainable Food Systems*, *7*. https://doi.org/10.3389/fsufs.2023.1114405
3. Ghosh, A. (2021). Disciplinary power and practices of body politics: an evaluation of Dalit women in Bama's Sangati and P. Sivakami's The Grip of Change through Foucauldian discourse analysis. *Humanities and Social Sciences Communications*, *8*(1). https://doi.org/10.1057/s41599-021-00866-y
4. Goswami, S., & Pinto, E. P. (2022). Employing innovative evidence-backed community processes for maternal health services by Dalit women. *International Journal for Equity in Health*, *21*. https://doi.org/10.1186/s12939-022-01776-4
5. Goyal, T. (2023). Representation from Below: How Women's Grassroots Party

Activism Promotes Equal Political Participation. *American Political Science Review*, *118*(3), 1415. https://doi.org/10.1017/s0003055423000953

6. Goyal, T. (2024). Local political representation as a pathway to power: A natural experiment in India. *American Journal of Political Science*, *69*(2), Pg. **516**. https://doi.org/10.1111/ajps.12840
7. Jiwani, Z., Raval, V. V., Steele, M., & Goldberg, S. B. (2022). Caste and COVID 19: Psychosocial disparities amongst rural Indian women during the coronavirus pandemic. *Journal of Social Issues*, *79*(2), Pg. **646**. https://doi.org/10.1111/josi.12532
8. Kumar, A., Bapuji, H., & Mir, R. (2021). "Educate, Agitate, Organize": Inequality and Ethics in the Writings of Dr. Bhimrao Ramji Ambedkar. *Journal of Business Ethics*, *178*(1), 1. https://doi.org/10.1007/s10551-021-04770-y
9. Liczbiñska, G., Brabec, M., Gautam, R. K., Jhariya, J., & Kumar, R. (2023). From little girls to adult women: Changes in age at marriage in Scheduled Castes from Madhya Pradesh and Uttar Pradesh, India. *PLoS ONE*, *18*(2). https://doi.org/10.1371/journal.pone.0281506
10. Mal, P., & Saikia, N. (2024). Disparity by caste and tribe: Understanding women's empowerment and health outcomes in India. *Social Science & Medicine*, *354*, 117074. https://doi.org/10.1016/j.socscimed.2024.117074
11. Mishra, P. S., Veerapandian, K., & Choudhary, P. K. (2021). Impact of socio-economic inequity in access to maternal health benefits in India: Evidence from Janani Suraksha Yojana using NFHS data. *PLoS ONE*, *16*(3). https://doi.org/10.1371/journal.pone.0247935
12. Pandey, S., Rahut, D. B., & Araki, T. (2024). Ethnicity/caste and child anthropometric outcomes in India using the National Family Heath Survey 2015–16 and 2019–21. *PLoS ONE*, *19*(12). https://doi.org/10.1371/journal.pone.0311092
13. Raft, B., & Dahlin, K. M. (2025). The Climate Crisis as a Poverty Crisis: How climate change amplifies (im)mobility and gendered vulnerabilities. *Anti-Trafficking Review*, *25*, 12. https://doi.org/10.14197/atr.201225252
14. RamPrakash, R., & Lingam, L. (2021). Why is women's utilization of a publicly funded health insurance low?: a qualitative study in Tamil Nadu, India. *BMC Public Health*, *21*(1). https://doi.org/10.1186/s12889-021-10352-4
15. Sreekumar, S. (2023). Understanding Dalit equity: a critical analysis of primary health care policy discourse of Kerala in the context of 'Aardram' mission. *International Journal for Equity in Health*, *22*(1). https://doi.org/10.1186/s12939-023-01978-4